Journal of Research and Development
A Multidisciplinary International Level Referred and Double Blind Peer Reviewed, Open Access
ISSN : 2230-9578 | Website: https://jrdrvb.org Volume-17, Issue-11(A)| November- 2025

Original Article

बिहार की राजनीति में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति: नेतृत्व और विकास

धर्मेन्द्र कुमार पासवान[1], डॉ. राजीव रौशन[2]

[1]शोधार्थी, विश्वविद्यालय राजनीति विज्ञान विभाग, ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा (बिहार)

[2]सहायक प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान विभाग, आर. एन.ए.आर. कॉलेज, समस्तीपुर

Email: Dharmendra11125@Gmail.com

Manuscript ID:
JRD -2025-171130
ISSN: 2230-9578
Volume 17
Issue 11(A)
Pp. 160-166
November. 2025
Submitted: 18 Oct. 2025
Revised: 28 Oct. 2025
Accepted: 11 Nov. 2025
Published: 30 Nov. 2025

सारांश

बिहार की राजनीति में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति नेतृत्व के उद्भव, उसके स्वरूप और विकास-प्रक्रिया का अर्थ मूलतः उस सामाजिक-राजनीतिक बदलाव से है, जिसके माध्यम से इन समुदायों के लोग निर्णय-निर्माण की मुख्यधारा में शामिल हुए और सत्ता-संरचना में अपनी भागीदारी स्थापित कर पाए। स्वतंत्रता के पश्चात राजनीतिक आरक्षण, पंचायत-स्तरीय सुधारों और विभिन्न दलों की नीतियों ने प्रतिनिधित्व की जो ऐतिहासिक पृष्ठभूमि तैयार की, वह आज के अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति नेतृत्व की गठन-प्रक्रिया को समझने के लिए आधारभूमि प्रदान करती है। आरक्षण व्यवस्था ने जहाँ विधायी सदनों में प्रतिनिधित्व का विस्तार किया, वहीं पंचायती राज की संरचना ने नए जमीनी नेतृत्व के उभार को भी सशर्त संभव बनाया। यही उभरता नेतृत्व स्थानीय शासन, विकास योजनाओं के क्रियान्वयन और निगरानी-तंत्र को अधिक प्रभावी बनाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। इसके बावजूद अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति नेतृत्व अनेक संरचनात्मक बाधाओं से जूझता है—सीमित निर्णय-शक्ति, सामाजिक भेदभाव और आर्थिक संसाधनों की कमी इसके प्रमुख अवरोध हैं। इसी के साथ विकास-विमर्श भी परिवर्तित हो रहा है, जहाँ पारंपरिक पहचान-आधारित राजनीति के साथ शिक्षा, कौशल-विकास, भूमि-अधिकार, स्वास्थ्य सुविधाएँ और सामाजिक सुरक्षा जैसे मुद्दे अधिक प्रमुखता प्राप्त कर रहे हैं। महादलित विकास मिशन, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति Sub-Plan तथा शिक्षा-केन्द्रित कल्याणकारी पहलों ने इन समुदायों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति पर महत्वपूर्ण प्रभाव डाला है, जिसका विश्लेषण आवश्यक है। इन्हीं परिवर्तनों की पृष्ठभूमि में यह आलेख इस बात पर भी विचार करता है कि अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति नेतृत्व के वास्तविक सशक्तिकरण के लिए राजनीतिक निर्णय-संरचना में उनकी भागीदारी कैसे बढ़ाई जाए, सामाजिक भेदभाव को किस प्रकार न्यून किया जाए, तथा समुदाय-आधारित विकास-तंत्र को कैसे अधिक सुदृढ़ बनाया जाए।

मुख्य शब्द: *बिहार, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, राजनीतिक नेतृत्व, सामाजिक न्याय, विकास विमर्श, शिक्षा एवं कौशल विकास*

परिचय

बिहार, जिसे भारतीय लोकतंत्र की प्रयोगशाला के रूप में देखा जाता है, सामाजिक न्याय और राजनीतिक आंदोलनों की ऐतिहासिक भूमि रहा है। यहाँ की राजनीति सदैव जातिगत संरचनाओं, सामाजिक समीकरणों और नेतृत्व के उदय से प्रभावित रही है। इस परिदृश्य में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति समुदाय केवल जनसांख्यिकीय उपस्थिति ही नहीं, बल्कि एक महत्वपूर्ण राजनीतिक शक्ति का प्रतिनिधित्व करते हैं। इन समुदायों की भूमिका राज्य की राजनीतिक दिशा और सामाजिक विमर्श को गहराई से प्रभावित करती रही है।

Creative Commons (CC BY-NC-SA 4.0)
This is an open access journal, and articles are distributed under the terms of the Creative Commons Attribution-NonCommercial-ShareAlike 4.0 International Public License, which allows others to remix, tweak, and build upon the work noncommercially, as long as appropriate credit is given and the new creations ae licensed under the idential terms.

Address for correspondence:
धर्मेन्द्र कुमार पासवान, शोधार्थी, विश्वविद्यालय राजनीति विज्ञान विभाग, ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा (बिहार)

How to cite this article:
पासवान, . धर्मेन्द्र . कुमार ., & रौशन, . राजीव . (2025). बिहार की राजनीति में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति: नेतृत्व और विकास. Journal of Research and Development, 17(11(A)), 160–166. https://doi.org/10.5281/zenodo.17893644

Quick Response Code:
Website: https://jrdrvb.org/
DOI: 10.5281/zenodo.17893644
OPEN ACCESS

Journal of Research and Development
A Multidisciplinary International Level Referred and Double Blind Peer Reviewed, Open Access
ISSN : 2230-9578 | Website: https://jrdrvb.org Volume-17, Issue-11(A)| November- 2025

2011 की जनगणना के अनुसार, बिहार की कुल जनसंख्या लगभग 10.41 करोड़ है, जिसमें अनुसूचित जातियों का हिस्सा 15.7% और अनुसूचित जनजातियों का हिस्सा 1.3% है। यह सामूहिक रूप से एक बड़ी आबादी है, जो चुनावी परिणामों और सामाजिक विमर्श में निर्णायक भूमिका निभाती है। इन समुदायों की उपस्थिति मुख्यतः ग्रामीण क्षेत्रों में केंद्रित है, जहाँ कृषि और श्रम आधारित आजीविका प्रमुख है।[i]

सामाजिक-आर्थिक स्थिति की दृष्टि से देखा जाए तो शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार और भूमि स्वामित्व जैसे क्षेत्रों में इन समुदायों को संरचनात्मक चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। बिहार की कुल साक्षरता दर 61.8% है, किंतु अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति समुदायों में यह दर राज्य के औसत से कम है। प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाओं तक सीमित पहुँच के कारण शिशु मृत्यु दर और मातृ मृत्यु दर अपेक्षाकृत अधिक है। आर्थिक स्थिति में अधिकांश लोग असंगठित क्षेत्र में कार्यरत हैं, जहाँ स्थायी रोजगार और सामाजिक सुरक्षा का अभाव है। भूमि स्वामित्व में असमानता बनी हुई है, जिससे आर्थिक सशक्तिकरण बाधित होता है और सामाजिक गतिशीलता सीमित रहती है।[ii] राजनीतिक संदर्भ में स्वतंत्रता के बाद संविधान ने आरक्षण की व्यवस्था के माध्यम से इन समुदायों को राजनीतिक प्रतिनिधित्व का अवसर प्रदान किया। बिहार विधानसभा और संसद की आरक्षित सीटों ने अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति नेताओं को उभरने का मंच दिया। इसने उन्हें केवल मतदाता नहीं, बल्कि सक्रिय निर्णय-निर्माता बनने का अवसर दिया। समय के साथ इन नेताओं ने सामाजिक न्याय, समान अवसर और विकास की माँगो को राजनीतिक विमर्श का हिस्सा बनाया, जिससे राज्य की राजनीति में एक नया विमर्श उभरा। इस अध्ययन का महत्व इस प्रश्न पर केंद्रित है कि बिहार की राजनीति में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति नेतृत्व का उद्भव किस प्रकार हुआ और इसने राज्य के विकास विमर्श को किस हद तक प्रभावित किया। यह विश्लेषण तीन स्तरों पर महत्वपूर्ण है: पहला, राजनीतिक बदलाव का अध्ययन, जिसमें संवैधानिक आरक्षण के माध्यम से नेतृत्व का उदय और उसका प्रभाव देखा जाएगा; दूसरा, सामाजिक न्याय का परीक्षण, जिसमें संख्यात्मक प्रतिनिधित्व से गुणवत्तापूर्ण प्रतिनिधित्व की ओर संक्रमण का मूल्यांकन होगा; और तीसरा, विकास नीति निर्माण की समझ, जिसमें यह देखा जाएगा कि विकास विमर्श में हाशिये के समुदायों की ज़रूरतों को कितनी प्राथमिकता दी गई।

इस आलेख के उद्देश्य और शोध प्रश्न स्पष्ट रूप से परिभाषित हैं। इसमें बिहार की राजनीति में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति नेतृत्व के उदय और उसकी ऐतिहासिक यात्रा का विश्लेषण किया जाएगा। प्रमुख राजनीतिक दलों में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति नेताओं की भूमिका और प्रभाव का अध्ययन किया जाएगा। यह भी जाँचा जाएगा कि अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति नेतृत्व ने सामाजिक न्याय और कल्याणकारी योजनाओं पर आधारित विकास विमर्श को किस हद तक आकार दिया है। अंततः, इस नेतृत्व के सामने आने वाली संरचनात्मक और राजनीतिक चुनौतियों की पहचान की जाएगी, ताकि यह समझा जा सके कि भविष्य में इन समुदायों की राजनीतिक भागीदारी और सामाजिक सशक्तिकरण किस दिशा में अग्रसर हो सकता है।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और राजनीतिक प्रतिनिधित्व

भारत के संविधान निर्माण के साथ ही अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति समुदायों के राजनीतिक सशक्तीकरण को एक मूलभूत सिद्धांत के रूप में स्वीकार किया गया था। 1950 के संविधान ने पहली बार संसद और राज्य विधानसभाओं में इन समुदायों के लिए राजनीतिक आरक्षण का प्रावधान किया, ताकि वे नीति–निर्माण प्रक्रिया में सम्मानजनक और प्रभावी रूप से शामिल हो सकें। बिहार, जहाँ अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति आबादी ऐतिहासिक रूप से सामाजिक और आर्थिक रूप से कमजोर रही थी, इस संवैधानिक प्रावधान से विशेष रूप से प्रभावित होने वाला राज्य था। संविधान के अनुच्छेद 330 से 332 के माध्यम से संसदीय और विधानमंडलीय सीटों में आरक्षण की व्यवस्था की गई, जिसका उद्देश्य हाशिए पर स्थित समूहों के राजनीतिक प्रतिनिधित्व को सुनिश्चित करना, निर्णय–निर्माण में उनकी आवाज़ को शामिल करना और सामाजिक न्याय की संवैधानिक नींव को मजबूत करना था।

1952 में जब भारत में पहला आम चुनाव हुआ, उस समय बिहार में कुल 330 विधानसभा सीटें थीं, जिनमें से 34 सीटें अनुसूचित जाति के लिए और 2 सीटें अनुसूचित जनजाति के लिए आरक्षित थीं। लोकसभा में बिहार की 53 सीटों में से 6 सीटें अनुसूचित जाति के लिए आरक्षित थीं, जबकि अनुसूचित जनजाति के लिए कोई सीट आरक्षित नहीं थी क्योंकि उस समय बिहार में अनुसूचित जनजाति जनसंख्या अत्यंत कम थी।[iii] इन आँकड़ों से स्पष्ट होता है कि संविधान लागू होते ही अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति समुदाय को व्यापक राजनीतिक अधिकार और प्रतिनिधित्व का अवसर मिला, जो उस दौर की सामाजिक संरचना के संदर्भ में एक महत्वपूर्ण परिवर्तन साबित हुआ। समय के साथ बढ़ती आबादी और नए परिसीमन के आधार पर आरक्षित सीटों की संख्या में परिवर्तन होता गया। 2008 में परिसीमन आयोग की रिपोर्ट लागू होने के बाद बिहार में वर्तमान व्यवस्था के अनुसार 243 सदस्यीय विधानसभा में 38 सीटें अनुसूचित जाति के लिए और 2 सीटें अनुसूचित जनजाति के लिए आरक्षित हैं। इस प्रकार कुल 40 सीटें, अर्थात लगभग 16.4 प्रतिशत सीटें, आरक्षित वर्गों के लिए निर्धारित हैं। वहीं बिहार की 40 लोकसभा सीटों में 6 सीटें अनुसूचित जाति के लिए आरक्षित हैं और अनुसूचित जनजाति के लिए कोई सीट आरक्षित नहीं है। यह संरचना दर्शाती है कि संविधान से आरक्षण की जो प्रक्रिया

Journal of Research and Development
A Multidisciplinary International Level Referred and Double Blind Peer Reviewed, Open Access
ISSN : 2230-9578 | Website: https://jrdrvb.org Volume-17, Issue-11(A)| November- 2025

प्रारंभ हुई थी, वह आज भी राजनीतिक प्रतिनिधित्व की एक केंद्रीय धुरी बनी हुई है। बिहार की राजनीति में एक और बड़ा परिवर्तन 1992-93 में 73वें और 74वें संविधान संशोधन के बाद आया, जब स्थानीय स्वशासन की संस्थाओं-पंचायतों और नगरपालिकाओं में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति और महिलाओं के लिए आरक्षण लागू किया गया। इससे पहली बार ग्राम स्तर पर नेतृत्व के व्यापक अवसर उपलब्ध हुए। पंचायत सदस्य, मुखिया, सरपंच और जिला परिषद जैसे पदों पर अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति को जनसंख्या के अनुपात में आरक्षण प्राप्त हुआ और इन आरक्षित पदों में से एक–तिहाई सीटें महिलाओं के लिए तय की गईं, जिसने अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति महिला नेतृत्व को उभरने का महत्वपूर्ण अवसर दिया।[iv]

बिहार के पंचायत चुनावों के आँकड़े इस परिवर्तन को और भी स्पष्ट करते हैं। 2001 के पंचायत चुनावों में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति समुदाय से 90,000 से अधिक प्रतिनिधि निर्वाचित हुए। 2016 के पंचायत चुनावों में कुल लगभग 2.56 लाख निर्वाचित प्रतिनिधियों में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति की भागीदारी 15 से 17 प्रतिशत के बीच दर्ज की गई।[v] इससे यह प्रमाणित होता है कि पंचायत प्रणाली ने दलित–महादलित समुदायों को पहली बार बड़े पैमाने पर राजनीतिक प्रशिक्षण, निर्णय लेने की क्षमता और सामाजिक प्रतिष्ठा विकसित करने में मदद की।

आरक्षण ने बिहार की राजनीतिक संरचना पर गहरा प्रभाव डाला। जिन वर्गों की पहले राजनीति में कोई निर्णायक भूमिका नहीं थी, वे विधानमंडल और पंचायत दोनों स्तरों पर संस्थागत रूप से शामिल होने लगे। इससे नेतृत्व का आधार विस्तृत हुआ और पहले जहाँ अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति समुदाय से केवल कुछ प्रतिष्ठित नेता ही सामने आते थे, वहीं अब हजारों पंचायत प्रतिनिधियों ने एक नए सामाजिक–राजनीतिक वर्ग का निर्माण किया। सामाजिक न्याय की राजनीति, विशेषकर 1990 के दशक के बाद, इसी संरचनात्मक परिवर्तन से मजबूत हुई। इसके साथ ही नीतिगत और बजटीय प्राथमिकताओं में भी उल्लेखनीय बदलाव आया जैसे महादलित विकास मिशन, छात्रवृत्ति योजनाएँ, स्कॉलरशिप कार्यक्रम और अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति सब–प्लान जैसी पहलों को अधिक महत्व मिलना शुरू हुआ। समग्र रूप से देखा जाए तो 1950 के संविधान से प्रारंभ हुआ अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति राजनीतिक आरक्षण बिहार की राजनीति का एक निर्णायक मोड़ था। इसने न केवल उच्च स्तरीय प्रतिनिधित्व (विधानसभा और संसद) को बदला, बल्कि पंचायत स्तर पर भी लोकतांत्रिक भागीदारी को व्यापक किया। 73वें और 74वें संशोधन ने इस प्रतिनिधित्व को और गहरा करते हुए एक नए दलित–महादलित नेतृत्व वर्ग को विकसित किया, जो आज बिहार की समकालीन राजनीति में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है।

अनुसूचित जाति–जनजाति नेतृत्व: स्वरूप और प्रभाव

बिहार की राजनीति में अनुसूचित जाति–जनजाति नेतृत्व का विकास दो परतों में क्रमशः उभरता दिखाई देता है—एक ओर दलगत नेतृत्व, और दूसरी ओर पंचायतों एवं स्थानीय शासन संस्थाओं से विकसित होने वाला जमीनी नेतृत्व। दोनों स्तरों के नेतृत्व की कार्यप्रणाली, राजनीतिक प्रभाव तथा सामाजिक पहुँच अपनी विशिष्टताओं के साथ राज्य की नीतिगत दिशा और विकासात्मक प्राथमिकताओं को गहराई से प्रभावित करती है। दलगत नेतृत्व की संरचना पर दृष्टि डालें तो बिहार के प्रमुख दल—जदयू, राजद और भाजपा—पिछले दो दशकों में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति समुदाय को अपनी संगठनात्मक और सत्ता-संरचना में सम्मिलित करने हेतु भिन्न-भिन्न रणनीतियों का प्रयोग करते रहे हैं। जदयू ने नीतीश कुमार के नेतृत्व में "महादलित" श्रेणी के राजनीतिक संगठनीकरण पर विशेष बल दिया। 2007 में आरंभ की गई महादलित नीति के परिणामस्वरूप राज्य मंत्रिमंडल में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति समुदाय के प्रतिनिधियों का अनुपात उल्लेखनीय रूप से बढ़ा; 2020 की सरकार में इन समुदायों से आने वाले मंत्रियों की भागीदारी लगभग 12–14% रही। राजद की राजनीति सामाजिक न्याय के विमर्श पर आधारित रही है, जिसमें दलित–पिछड़ा गठबंधन उसकी प्रमुख राजनीतिक धुरी रहा। 1990 के दशक से लेकर 2005 तथा 2015 के बाद गठबंधन चरण में दलित नेतृत्व को संगठनात्मक पदों तथा टिकट वितरण दोनों स्तरों पर महत्त्वपूर्ण स्थान मिला। भाजपा ने अपने "अनुसूचित जाति मोर्चा" और विभिन्न स्तरों पर सक्रिय दलित नेतृत्व के माध्यम से संगठन का विस्तार किया; संघ–परिवार के प्रभाव से भी कई अनुसूचित जाति समुदायों में पार्टी की पहुँच तेज़ी से बढ़ी। बिहार में भाजपा द्वारा अनुसूचित जाति उम्मीदवारों को टिकट देने की औसत दर प्रायः 12–15% के आसपास रही है, जिससे यह समुदाय राज्य की शक्ति-राजनीति में एक प्रभावशाली इकाई के रूप में उभरता है।[vi]

दलगत नेतृत्व के समानांतर, पंचायतों और स्थानीय स्वशासन संस्थाओं में आरक्षण लागू होने के बाद अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति समुदाय से जमीनी नेतृत्व का उदय अत्यंत महत्वपूर्ण रहा है। 2001, 2006, 2011, 2016 और 2021 के पंचायत चुनावों में इन समुदायों की राजनीतिक भागीदारी में अभूतपूर्व वृद्धि दर्ज की गई। 2001 में जहाँ 90,000 से अधिक अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति प्रतिनिधि निर्वाचित हुए, वहीं 2016 में कुल 2.56 लाख पंचायत प्रतिनिधियों में से लगभग 15–17% प्रतिनिधि

Journal of Research and Development
A Multidisciplinary International Level Referred and Double Blind Peer Reviewed, Open Access
ISSN : 2230-9578 | Website: https://jrdrvb.org Volume-17, Issue-11(A)| November- 2025

अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति समुदाय से थे। इस समूह में बड़ी संख्या महिलाओं की रही, जो आरक्षण के माध्यम से पहली बार निर्णय-निर्माण की औपचारिक प्रक्रियाओं में शामिल हुईं। परिणामस्वरूप, स्थानीय विकास योजनाओं—जैसे मनरेगा, सड़क निर्माण, आवास योजना, छात्रवृत्ति तथा विभिन्न सार्वजनिक सेवाओं—के क्रियान्वयन पर अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति प्रतिनिधियों का प्रत्यक्ष प्रभाव दिखाई देने लगा। अनेक अध्ययनों से स्पष्ट होता है कि कई जिलों में मुखिया या वार्ड सदस्य के रूप में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति नेतृत्व के उभार से शिक्षा, शौचालय निर्माण, आवास तथा पेयजल से संबंधित योजनाओं में पारदर्शिता और जवाबदेही में वृद्धि हुई है।[vii]

यह नेतृत्व सिर्फ़ प्रतिनिधित्व का विस्तार नहीं करता, बल्कि अनेक सामाजिक सरोकारों को राजनीतिक विमर्श के केंद्र में लाने का कार्य भी करता है। बिहार के ग्रामीण क्षेत्रों में जातिगत भेदभाव की उपस्थिति अब भी गहरी है, और भूमि-विहीनता अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति समुदाय के लिए आजीविका का गंभीर संकट बनी हुई है। राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण (NFHS-5) के अनुसार राज्य में अनुसूचित जाति समुदाय की लगभग 70% जनसंख्या कृषि-मजदूरी पर निर्भर है, जबकि भूमि-स्वामित्व का प्रतिशत 10% से भी कम है। ऐसी परिस्थितियों में शिक्षा, सुरक्षा, सामाजिक न्याय तथा कल्याणकारी योजनाओं तक प्रभावी पहुँच की माँग स्वाभाविक रूप से राजनीतिक मुद्दों में परिवर्तित होती है। श्रम सर्वेक्षण (2022–23) दर्शाता है कि राज्य में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति युवाओं में बेरोज़गारी की दर प्रदेश के औसत से लगभग 2–3% अधिक है, जिससे यह प्रश्न राजनीतिक नेतृत्व के समक्ष लगातार चुनौती के रूप में उपस्थित होता है।[viii]

यद्यपि नेतृत्व का विस्तार हो रहा है, फिर भी अनेक संरचनात्मक बाधाएँ मौजूद हैं। राजनीतिक दलों के शीर्ष पद प्रायः गैर-अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति समुदायों के पास केंद्रित रहते हैं, जिसके कारण अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति नेताओं के पास निर्णय लेने की वास्तविक क्षमता सीमित रह जाती है। कई स्थितियों में उन्हें केवल प्रतीकात्मक प्रतिनिधित्व प्राप्त होता है, वास्तविक शक्ति-साझेदारी नहीं—इस प्रवृत्ति को “political tokenism” कहा जाता है। आर्थिक-सामाजिक वंचना भी एक महत्त्वपूर्ण अवरोध है; चुनावी राजनीति की बढ़ती लागत अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति उम्मीदवारों के सीमित संसाधनों के कारण उनके राजनीतिक सशक्तिकरण को चुनौती देती है। जाति-आधारित हिंसा और दमन के मामले भी नेतृत्व को जोखिमपूर्ण बनाते हैं। राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो (NCRB 2022) के अनुसार अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति अत्याचार मामलों में बिहार भारत के शीर्ष दस राज्यों में शामिल है, जिससे राजनीतिक भागीदारी की सामाजिक सुरक्षा कमजोर पड़ती है। स्थानीय शासन में कार्यरत अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति प्रतिनिधियों के सामने प्रशासनिक क्षमता, तकनीकी जानकारी और संस्थागत संसाधनों का अभाव भी एक गंभीर चुनौती के रूप में उभरता है। कई प्रतिनिधि पर्याप्त प्रशिक्षण और शासन-संबंधी अनुभव के अभाव में योजनाओं के प्रभावी क्रियान्वयन तथा नौकरशाही के साथ संतुलित संवाद स्थापित करने में कठिनाई का अनुभव करते हैं। इसके बावजूद यह उभरता हुआ नेतृत्व बिहार की लोकतांत्रिक संस्कृति को अधिक व्यापक, सहभागी और समावेशी बनाने की दिशा में महत्वपूर्ण योगदान दे रहा है।

विकास विमर्श और नीतिगत पहल

बिहार के अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति समुदायों के संदर्भ में विकास की आवश्यकता केवल आर्थिक सुधार का विषय नहीं है; यह गहरे ऐतिहासिक, सामाजिक तथा संरचनात्मक असमानताओं से संबद्ध एक व्यापक प्रश्न है। इस असमानता का प्रभाव शिक्षा, स्वास्थ्य, पोषण, आय, भूमि-अधिकार, आवास, बुनियादी सार्वजनिक सुविधाओं और सामाजिक सुरक्षा जैसे अनेक आयामों में स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। इन समुदायों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति राज्य के समग्र औसत से निरंतर नीचे बनी हुई है और यह अंतर कई दशकों से स्थिर बना हुआ है। राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण (NFHS-5) के अनुसार बिहार में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति परिवारों में बाल कुपोषण 45–50 प्रतिशत दर्ज किया गया है, जो राज्य के औसत 42–43 प्रतिशत से अधिक है तथा राष्ट्रीय स्तर पर दलित एवं आदिवासी बच्चों की पोषण स्थितियों से मेल खाता है। कुपोषण के साथ-साथ एनीमिया की व्यापकता भी चिंताजनक है। NFHS-5 के अनुसार अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति महिलाओं में एनीमिया की दर 65–70 प्रतिशत पाई गई, जो मातृ स्वास्थ्य सेवाओं, प्रसव-पूर्व देखभाल और पोषण कार्यक्रमों की अपर्याप्तता को इंगित करती है।[ix]

स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुँच में यह विषमता कई कारकों जैसे प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों की सीमित उपलब्धता, दवाओं और चिकित्सकों की कमी, तथा सामाजिक भेदभाव—से और गहरी होती जाती है। विभिन्न अध्ययनों में उल्लेखित है कि अनेक ग्रामीण क्षेत्रों में दलित बस्तियों को स्वास्थ्यकर्मियों द्वारा अपेक्षित प्राथमिकता नहीं दी जाती, जिससे टीकाकरण, प्रसव-पूर्व जांच और पोषण योजनाओं के लाभार्थियों का कवरेज प्रभावित होता है। शिक्षा के क्षेत्र में भी स्थिति कम चुनौतीपूर्ण नहीं है। यद्यपि प्राथमिक स्तर पर अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति बालकों की विद्यालय-उपस्थिति में वृद्धि दर्ज की गई है, किन्तु माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक स्तर पर यह

Journal of Research and Development
A Multidisciplinary International Level Referred and Double Blind Peer Reviewed, Open Access
ISSN : 2230-9578 | Website: https://jrdrvb.org Volume-17, Issue-11(A)| November- 2025

उपस्थिति उल्लेखनीय रूप से घट जाती है। बिहार स्कूल शिक्षा परिषद के आँकड़ों के अनुसार 9वीं से 12वीं कक्षा के बीच अनुसूचित जाति विद्यार्थियों की ड्रॉप आउट दर 25 प्रतिशत से अधिक है, जबकि अनुसूचित जनजाति विद्यार्थियों में यह दर कई जिलों में 30 प्रतिशत तक पहुँचती है। तकनीकी शिक्षा, आईटीआई, पॉलिटेक्निक तथा उच्च शिक्षा संस्थानों में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति समुदाय की भागीदारी मात्र 5–7 प्रतिशत है, जो यह दर्शाता है कि छात्रवृत्ति एवं आवासीय विद्यालय जैसी योजनाओं के बावजूद सामाजिक-आर्थिक बाधाएँ अभी भी उच्च शिक्षा में उनके प्रवेश को सीमित करती हैं।[x]

आर्थिक स्तर पर भूमि-विहीनता तथा असंगठित श्रम पर निर्भरता इन समुदायों की वंचना को और अधिक गहरा बनाती है। बिहार में अनुसूचित जाति समुदाय के केवल 10–12 प्रतिशत परिवार ही कृषि भूमि के स्वामी हैं, जबकि लगभग 70 प्रतिशत लोग खेत-मजदूरी अथवा अस्थिर, ठेका-आधारित श्रम में संलग्न हैं। यह आय-संरचना उन्हें गरीबी, ऋण-निर्भरता, आजीविका की असुरक्षा और पलायन जैसे जोखिमों के प्रति अत्यधिक संवेदनशील बनाती है। 2021–22 के श्रम सर्वेक्षण के अनुसार अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति परिवारों में पलायन की दर राज्य के अन्य सामाजिक समूहों की तुलना में 15–18 प्रतिशत अधिक है। यह स्थिति संकेत देती है कि बहुआयामी गरीबी केवल आय-वंचना का परिणाम नहीं है, बल्कि स्वास्थ्य, शिक्षा, आवास, स्वच्छता और सामाजिक सुरक्षा की कमी से निर्मित एक जटिल अनुभव है। अतः विकास हस्तक्षेपों का लक्ष्य मात्र आय-वृद्धि अथवा रोजगार-सृजन तक सीमित नहीं रह सकता; बल्कि इसमें सामाजिक सुरक्षा तंत्र का विस्तार, गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, स्वास्थ्य अवसंरचना, भूमि-सुधार तथा बुनियादी सुविधाओं के व्यापक विकास को सम्मिलित करना आवश्यक है।[xi] इस परिप्रेक्ष्य में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति नेतृत्व ने विकास-नीति को दिशा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। राज्य तथा केंद्र सरकारों द्वारा लागू अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति Sub-Plan (अब अनुसूचित जाति Component और अनुसूचित जनजाति Component) ने शिक्षा, स्वास्थ्य, उद्यमिता, आवास तथा कौशल-विकास जैसे क्षेत्रों में लक्षित निवेश सुनिश्चित करने हेतु महत्वपूर्ण बजटीय प्रावधान किए हैं। बिहार में हाल के वर्षों में इन योजनाओं के अंतर्गत वार्षिक बजट का लगभग 15–17 प्रतिशत हिस्सा निर्धारित किया गया, जिसका एक बड़ा भाग शिक्षा-आधारित योजनाओं, छात्रवृत्ति एवं छात्रावास निर्माण, प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाओं, पेंशन योजनाओं और ग्रामीण आवास कार्यक्रमों पर व्यय किया गया।

2007 के बाद राज्य सरकार द्वारा महादलित विकास कार्यक्रमों की संरचना ने भी इस दिशा में एक महत्वपूर्ण हस्तक्षेप का कार्य किया। इन कार्यक्रमों में सामुदायिक भवन, कौशल प्रशिक्षण केंद्र, छात्रवृत्ति, साइकिल एवं पोशाक योजनाएँ, आवासीय विद्यालय, युवा क्लब और महिला सशक्तीकरण कार्यक्रम शामिल थे। विशेष रूप से साइकिल योजना ने अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति बालिकाओं की माध्यमिक शिक्षा में उपस्थिति और निरंतरता को सुदृढ़ किया। अनुसंधान दर्शाते हैं कि इस योजना के लागू होने के पश्चात् अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति लड़कियों के नामांकन में 25–30 प्रतिशत तक वृद्धि दर्ज की गई तथा ड्रॉप आउट दर में उल्लेखनीय गिरावट आई। इसी प्रकार ग्रामीण आवास योजना, जल–नल योजना और सड़क निर्माण जैसी आधारभूत सुविधाओं ने कमजोर वर्गों को प्रत्यक्ष लाभ पहुँचाया, क्योंकि इन योजनाओं की प्राथमिकता सूची में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति समुदायों को विशेष स्थान प्रदान किया गया था।[xii]विकास संबंधी विमर्श में गत वर्षों में एक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन भी उभरकर सामने आया है। जहाँ पहले सामाजिक न्याय की राजनीति मुख्यतः प्रतिनिधित्व और पहचान के प्रश्नों तक सीमित थी, वहीं वर्तमान में यह विमर्श आर्थिक अवसरों, कौशल-आधारित रोजगार, भूमि-अधिकार, तकनीकी शिक्षा, वित्तीय समावेशन तथा सामाजिक सुरक्षा के विस्तृत मुद्दों को समाहित करने लगा है। अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति नेतृत्व ने इस परिवर्तन को आगे बढ़ाने में उल्लेखनीय भूमिका निभाई है। वे लगातार छात्रावास सुविधाओं के विस्तार, तकनीकी शिक्षा में आरक्षित सीटों की वृद्धि, छात्रवृत्ति वितरण की पारदर्शिता, भूमिहीन दलित परिवारों के पुनर्वास, तथा मनरेगा के प्रभावी क्रियान्वयन जैसे मुद्दों को नीति-एजेंडा में शामिल करते रहे हैं। कई जिलों में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति जनप्रतिनिधियों द्वारा यह भी सुनिश्चित किया गया है कि पेंशन, आवास तथा छात्रवृत्ति योजनाओं के वितरण में जातिगत भेदभाव न हो और लाभ समयबद्ध रूप से उपलब्ध कराया जाए। बिहार में विकास विमर्श और नीतिगत पहलें अब केवल ऐतिहासिक सामाजिक न्याय की परिकल्पना तक सीमित नहीं रहीं; बल्कि उन्होंने शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास, आय-सृजन, कौशल-विकास, भूमि-सुरक्षा और सामाजिक सशक्तीकरण को एकीकृत करते हुए एक बहुआयामी दृष्टिकोण अपनाया है। अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति नेतृत्व—चाहे वह राज्यस्तरीय दलगत नेतृत्व हो अथवा पंचायतों से उभरने वाला जमीनी नेतृत्व—आज नीति-निर्माण, कार्यान्वयन और निगरानी के स्तरों पर महत्वपूर्ण और प्रभावी भूमिका निभा रहा है, जिसके परिणामस्वरूप बिहार के विकास ढाँचे में सामाजिक समावेशन की प्रक्रिया अधिक सुदृढ़ हुई है।

Journal of Research and Development
A Multidisciplinary International Level Referred and Double Blind Peer Reviewed, Open Access
ISSN : 2230-9578 | Website: https://jrdrvb.org Volume-17, Issue-11(A)| November- 2025

निष्कर्ष

बिहार की सामाजिक–राजनीतिक संरचना में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति नेतृत्व का निरंतर विस्तार राज्य की लोकतांत्रिक परिपक्वता का एक महत्वपूर्ण संकेतक माना जा सकता है। बीते दशकों में आरक्षण व्यवस्था, पंचायत-स्तरीय सुधारों तथा दलगत राजनीति की परिवर्तित रणनीतियों ने इन समुदायों को राजनीतिक मुख्यधारा में अधिक प्रभावकारी ढंग से सम्मिलित किया है। इसके परिणामस्वरूप अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति प्रतिनिधित्व में वृद्धि, उनकी राजनीतिक दृश्यता का सुदृढ़ होना तथा नीति-निर्माण की विभिन्न प्रक्रियाओं में उनकी सहभागिता का विस्तार स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। इसके बावजूद निर्णय-निर्माण के उच्चतम स्तरों पर उनकी वास्तविक प्रभाव क्षमता अभी भी सीमित है। राजनीतिक दलों के शीर्ष नेतृत्व और उच्च पदस्थ संरचनाओं पर गैर-अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति समूहों का प्रभुत्व बना रहने के कारण अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति नेतृत्व अनेक स्थितियों में प्रतीकात्मक या सीमित प्रभाव तक ही सीमित रह जाता है। आरक्षण व्यवस्था तथा स्थानीय स्वशासन से जुड़े सुधारों ने अवश्य ही जमीनी नेतृत्व के निर्माण को नई दिशा प्रदान की है। पंचायत चुनावों में आरक्षण ने उन प्रशासनिक एवं निर्णय-स्तरीय अवसरों को अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति समुदायों के लिए उपलब्ध करवाया, जिन तक वे पूर्व में सामाजिक एवं आर्थिक बाधाओं के चलते नहीं पहुँच पाते थे। इस उभरते हुए नेतृत्व ने स्थानीय शासन की योजनाओं के कार्यान्वयन, समुदाय-आधारित विकास और सामाजिक अधिकारों के विस्तार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास और सामाजिक सुरक्षा से संबद्ध योजनाओं में प्राप्त प्रगति इसके प्रत्यक्ष उदाहरण हैं। बावजूद इसके, कई क्षेत्रों में परिणाम असमान बने हुए हैं—जैसे कुपोषण, शिक्षा में उच्च ड्रॉप आउट दर, भूमि-विहीनता और आर्थिक अस्थिरता जैसी समस्याएँ अब भी व्यापक रूप से मौजूद हैं। यह असमानता इस तथ्य को रेखांकित करती है कि नीतिगत सुधार तभी प्रभावी हो सकते हैं जब उनके साथ संस्थागत सुदृढ़ीकरण, सामाजिक चेतना और सुचारु क्रियान्वयन का संतुलित संयोजन भी मौजूद हो।

वर्तमान राजनीतिक परिस्थिति में सभी प्रमुख दल अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति समुदाय को अपने राजनीतिक गठबंधन तथा सामाजिक समर्थन आधार में बढ़ती प्राथमिकता प्रदान कर रहे हैं। इसका कारण केवल चुनावी गणना नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय की अवधारणा में हो रहा परिवर्तन और विकास-उन्मुख राजनीति का उभार भी है। जाति-आधारित पहचान राजनीति आज भी बिहार के राजनीतिक यथार्थ का अविभाज्य अंग है, क्योंकि सामाजिक पहचान संसाधनों, अवसरों और प्रतिनिधित्व को प्रभावित करती है। तथापि, विकास-आधारित राजनीतिक विमर्श धीरे-धीरे एक नई दिशा का निर्माण कर रहा है, जिसमें शिक्षा, कौशल-विकास, आर्थिक सशक्तीकरण, तकनीकी भागीदारी और सामाजिक सुरक्षा जैसे मुद्दे अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति नेतृत्व के प्रमुख एजेंडा बनते जा रहे हैं।भविष्य की दिशा में शिक्षा और कौशल-विकास में निवेश सर्वाधिक महत्वपूर्ण तत्व के रूप में उभरता है। केवल आर्थिक सहायता या कल्याणकारी योजनाएँ पर्याप्त नहीं हैं, जब तक कि अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति विद्यार्थियों के लिए गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, तकनीकी प्रशिक्षण, डिजिटल साक्षरता तथा उच्च शिक्षा में भागीदारी को व्यवस्थित रूप से विस्तारित न किया जाए। साथ ही, राजनीतिक दलों की आंतरिक संरचनाओं में निर्णय-स्तरीय पदों पर अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति प्रतिनिधियों की वास्तविक भागीदारी सुनिश्चित करना आवश्यक है, ताकि वे महज प्रतीकात्मक भूमिका निभाने के बजाय नीति-निर्माण में निर्णायक योगदान दे सकें। सामाजिक भेदभाव, जो ग्रामीण और शहरी दोनों संदर्भों में अब भी विद्यमान है, को कम करने हेतु कानूनी हस्तक्षेप, सामाजिक जागरूकता, विद्यालय-स्तरीय कार्यक्रमों और सामुदायिक सहयोग की निरंतर आवश्यकता बनी हुई है।

विकास योजनाओं की प्रभावशीलता बढ़ाने हेतु समुदाय-आधारित निगरानी तथा भागीदारी को सुदृढ़ करना भी अत्यंत आवश्यक है। जब लाभार्थी स्वयं सामाजिक अंकेक्षण, योजना-समिति गतिविधियों और निगरानी प्रक्रियाओं में प्रत्यक्ष रूप से भाग लेते हैं, तब योजनाओं की पारदर्शिता और उत्तरदायित्व दोनों में सुधार आता है। विशेष रूप से अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति समुदायों के लिए सहभागिता-आधारित विकास ही दीर्घकालीन परिवर्तन का मार्ग प्रशस्त कर सकता है, क्योंकि यह न केवल स्थानीय नेतृत्व को सशक्त बनाता है, बल्कि समुदाय को विकास प्रक्रिया का सक्रिय सहभागी भी बनाता है। बिहार में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति नेतृत्व का उभार राजनीति, समाज और विकास के क्षेत्रों में एक परिवर्तनकारी प्रक्रिया का प्रतिनिधित्व करता है। यद्यपि यह प्रक्रिया अभी अधूरी है, परंतु यह स्पष्ट रूप से संकेत करती है कि राज्य एक ऐसे समाज की ओर अग्रसर है जहाँ अधिकारों और अवसरों का विस्तार अधिक समावेशी, न्यायसंगत और समानता-आधारित ढंग से आगे बढ़ रहा है।

Journal of Research and Development
A Multidisciplinary International Level Referred and Double Blind Peer Reviewed, Open Access
ISSN : 2230-9578 | Website: https://jrdrvb.org Volume-17, Issue-11(A)| November- 2025

संदर्भसूची

1. मिश्रा, अशोक. (2017). बिहार की सामाजिक संरचना और राजनीति . नई दिल्ली: लोकनीति प्रकाशन. पृ. 34–39.
2. कुमार, देवव्रत. (2019). दलित–आदिवासी समाज की सामाजिक-आर्थिक स्थिति. मुंबई: समाजशास्त्र अध्ययन केंद्र. पृ. 87–95.
3. सिंह, आर. (2010). स्वतंत्र भारत के प्रारम्भिक चुनाव. पटना: लोक नीति बुक्स. पृ. 87–89
4. कुमार, जगदीश. (2012). भारतीय परिसीमन आयोग: अध्ययन और विश्लेषण. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन. पृ. 154–156.
5. चौधरी, एम. (2018). बिहार में दलित राजनीति: पंचायत से संसद तक. पटना: समता बुक्स. पृ. 74–78.
6. चौधरी, विमल. (2021). आधुनिक बिहार की राजनीतिक संरचना , नई दिल्ली: लोकनीति पब्लिकेशन. पृ. 122–128.
7. मिश्रा, उमा शंकर. (2018). पंचायती राज और सामाजिक परिवर्तन. वाराणसी: लोकविकास प्रकाशन. पृ. 96–102.
8. कुमार, देवव्रत. (2022). दलित समाज और आर्थिक संरचना. पटना: समाज विज्ञान प्रकाशन. पृ. 77–83.
9. झा, एम. के. (2020). दलित समुदाय और स्वास्थ्य असमानताएँ. पटना: विकास प्रकाशन. पृ. 61–68.
10. सिंह, आर. के. (2018). बिहार में शिक्षा और सामाजिक परिवर्तन. नई दिल्ली: लोकनीति प्रकाशन. पृ. 102–110.
11. वर्मा, एस. (2017). भारत में दलित अर्थव्यवस्था: संरचना और चुनौतियाँ . मुंबई: समाजशास्त्र अध्ययन केंद्र. पृ. 145–153.
12. कुमार, दीपक. (2021). महादलित विकास मॉडल: बिहार का अनुभव. पटना: परिवर्तन प्रकाशन. पृ. 55–63.